अथर्ववेदका संक्षिप्त परिचय

चारों वेदोंमें ऋक्, यजुः और साम—ये मन्त्रलक्षणके आधारपर प्रसिद्ध हैं, किंतु अथर्ववेद इन तीनोंसे भिन्न नामसे जाना जाता है। चारों वेदोंका समष्टिगत नाम 'त्रयी' भी है। मूलतः इसीके आधारपर कुछ आधुनिक विद्वान् अथर्ववेदको अर्वाचीन कहते हैं, परंतु इसके पीछे कोई ठोस आधार या युक्ति नहीं है।

वैदिक मन्त्रोंका उच्चारण तीन प्रकारसे किया जाता है—(१) जिस मन्त्रमें अर्थके आधारपर पाद-व्यवस्था निश्चित है, उसे 'ऋक्' कहते हैं, (२) गीत्यात्मक मन्त्रको 'साम' तथा (३) इनसे अतिरिक्त जो मन्त्र हैं अर्थात् पद्यमय और गानमय मन्त्रोंसे अतिरिक्त जितने मन्त्र हैं, उन्हें 'यजुः' कहते हैं। यजुर्मन्त्र गद्य-रूपमें पढ़े जाते हैं। अथर्ववेदमें तीनों प्रकारके मन्त्र उपलब्ध हैं। अतः इस वेदका नाम ऋक्, यजुः और साम अर्थात् मन्त्रलक्षणके आधारपर नहीं, अपितु प्रतिपाद्य विषयवस्तुके आधारपर है। इसी कारण अथर्ववेदके अन्य विविध नाम भी हैं। इस प्रकार मन्त्र-लक्षणके आधारपर 'त्रयी' शब्दका प्रयोग हुआ है, तीन वेदोंके अभिप्रायसे नहीं। भगवान् कृष्णद्वैपायनने श्रौतयज्ञकर्मोंके आधारपर एक ही वेदको चार भागोंमें विभक्त किया है। इससे भी अथर्ववेदको अर्वाचीन नहीं कहा जा सकता।

अथर्ववेदके विविध नाम

अन्य वेदोंकी तरह अथर्ववेदका भी एक ही नाम क्यों नहीं रहा? अथर्ववेदको विभिन्न नाम देनेमें क्या प्रयोजन है? ऐसी जिज्ञासाकी शान्तिके लिये संक्षेपमें कुछ विचार किया जा रहा है—

अथर्ववेद अनेक नामोंसे अभिहित किया जाता है, जैसे—अथर्ववेद, अथर्वाङ्गिरोवेद, ब्रह्मवेद, भिषग्वेद तथा क्षत्रवेद आदि।

अथर्ववेद—

पाणिनीय धातुपाठमें '**थुर्वी**' धातु हिंसाके अर्थमें पठित है। वैदिक शब्दोंके परोक्षवृत्तिसाधर्म्यके आधारपर '**थुर्वी**' धातु ही '**थर्व**' के रूपमें परिणत हो गया है। अतः जिससे हिंसा नहीं होती है उसको अथर्व* कहते हैं।

वैदिक वाङ्मयमें '**हिंसा**' शब्द किसीकी हानि या परस्पर होनेवाले असामञ्जस्य आदिके अर्थमें भी प्रयुक्त है। अतः केवल प्राणवियोगानुकूल-व्यापार ही हिंसा नहीं है। सामान्यतः हिंसा दो प्रकारकी होती है—(१) आमुष्मिकी और (२) ऐहिकी। जिस कर्म या आचरणसे पारलौकिक सुखमें बाधा [हानि] होती है, उसको आमुष्मिकी हिंसा कहते हैं। इस प्रकारकी हिंसाको अथर्ववेदोक्त कर्मोंसे दूर किया जा सकता है। दूसरी इहलौकिक सुखमें होनेवाली बाधा भी अथर्ववेदोक्त शान्तिक तथा पौष्टिक कर्मोंसे दूर की जा सकती है। अतः जिससे किसी प्रकारकी हिंसा नहीं हो पाती है, उसके कारण 'अथर्ववेद' ऐसा नाम है।

अथर्वाङ्गिरोवेद—

अथर्ववेदका दूसरा नाम अथर्वाङ्गिरस भी है। अथर्ववेद (१०। ७। २०),महाभारत (३। ३०५। २), मनुस्मृति (११। ३३), याज्ञवल्क्यस्मृति (१। ३१२) तथा औशनसस्मृति (३। ४४) आदि ग्रन्थोंमें द्वन्द्वसमासके रूपमें 'अथर्वाङ्गिरस' शब्द प्रयुक्त है। इस नामके संदर्भमें गोपथब्राह्मणमें एक आख्यायिका है—

'प्राचीन कालमें सृष्टिके लिये तपस्या कर रहे स्वयम्भू ब्रह्माके रेतका जलमें स्खलन हुआ। उससे भृगु नामके महर्षि उत्पन्न हुए। वे भृगु स्वोत्पादक ब्रह्माके दर्शनार्थ व्याकुल हो रहे थे। उसी समय आकाशवाणी हुई—'हे अथर्वा! तिरोभूत ब्रह्माके दर्शनार्थ इसी जलमें अन्वेषण करो' [**'अथर्वाऽनमेतास्वेवाप्स्वन्विच्छ'** गो० ब्रा० १। ४]। तबसे भृगुका नाम ही 'अथर्वा' हो गया। पुनः रेतयुक्त जलसे आवृत 'वरुण' शब्दवाच्य ब्रह्माके सभी अङ्गोंसे रसोंका क्षरण हो गया। उससे अङ्गिरा नामके महर्षि उत्पन्न हुए। उसके बाद अथर्वा और अङ्गिराके कारणभूत ब्रह्माने दोनोंको तपस्या करनेके

* इस वेदके कुल ५९८७ मन्त्रमें २६९६ मन्त्र विशुद्ध अथर्वा-ऋषिके द्वारा दृष्ट हैं। अथर्वाङ्गिराके द्वारा दृष्ट मन्त्र ४९, बृहद्दिव या अथर्वाद्वारा दृष्ट मन्त्र-२९, मृगार या अथर्वाके ७, अथर्वा या वसिष्ठके ७, अथर्वा या कृतिके ४ और भृगुराथर्वणके द्वारा दृष्ट मन्त्र ७ हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर २७९९ मन्त्र तथा २२० सूक्तोंके द्रष्टा ऋषि अथर्वा होनेसे इस वेदका नाम अथर्ववेद है।

लिये प्रेरित किया। उन लोगोंकी तपस्याके प्रभावसे एक अथवा दो ऋचाओंके मन्त्रद्रष्टा बीस अथर्वा और अङ्गिरसोंकी उत्पत्ति हुई। उन्हीं तपस्या कर रहे ऋषियोंके माध्यमसे स्वयम्भू ब्रह्माने जिन मन्त्रोंके दर्शन किये, वही मन्त्रसमूह अथर्वाङ्गिरस वेद हो गया। साथ ही एक ऋचाके मन्त्रद्रष्टा ऋषियोंकी संख्या भी बीस होनेके कारण यह वेद बीस काण्डोंमें बँटा है।

कुछ विद्वानोंका मत यह है कि 'अथर्वन्' शब्द शान्तिक तथा पौष्टिक कर्मोंका वाचक है। इसके विपरीत 'अङ्गिरस्' पद घोर [अभिचारात्मक] कर्मोंका वाचक है। अथर्ववेदमें इन दोनों प्रकारके कर्मोंका उल्लेख मिलता है। अतः इसका नाम 'अथर्वाङ्गिरस' पड़ा। यह मत पूर्णतः स्वीकार्य नहीं है, क्योंकि अथर्ववेदमें सबसे अधिक अध्यात्मविषयक मन्त्रोंका संकलन है। उसके बाद शान्तिक तथा पौष्टिक कर्मोंसे सम्बद्ध मन्त्र हैं; किंतु आभिचारिक कर्मसे सम्बद्ध मन्त्र तो नगण्यरूपमें ही हैं।

ब्रह्मवेद—

अथर्ववेदके 'ब्रह्मवेद' अभिधानमें मुख्यतः तीन हेतु उपलब्ध होते हैं—(१) यज्ञकर्ममें ब्रह्मत्व-प्रतिपादन, (२) ब्रह्मविषयक दार्शनिक चिन्तन-गाथा तथा (३) ब्रह्मा नामक ऋषिसे दृष्ट मन्त्रोंका संकलन।

उपर्युक्त तीन हेतुओंमें प्रथम कारण उल्लेख्य है। श्रौतयज्ञका सम्पादन करनेके लिये चारों वेदोंकी आवश्यकता पड़ती है। जिनमें ऋग्वेदके कार्य होताद्वारा, यजुर्वेदके कार्य अध्वर्युद्वारा, सामवेदके कार्य उद्गाताद्वारा और अथर्ववेदके कार्य ब्रह्मा नामके ऋत्विजोंद्वारा सम्पन्न किये जाते हैं। यज्ञकार्यमें सम्भाव्य अनिष्टका दूरीकरण, प्रायश्चित्त-विधियोंद्वारा यज्ञके त्रुटि-निवारण, यज्ञानुष्ठानके क्रममें अन्य ऋत्विजोंके लिये अनुज्ञा-प्रदान ब्रह्माके प्रमुख कार्य हैं। इस प्रकार किसी भी श्रौतयज्ञकी सफलताके लिये ब्रह्माकी अध्यक्षता आवश्यक होती है। अतः यज्ञकर्ममें ब्रह्मत्वप्रतिपादनके कारण अथर्ववेदका दूसरा नाम 'ब्रह्मवेद' युक्तिसंगत ही है।

ब्रह्मवेदाभिधानका दूसरा कारण ब्रह्मविषयक दार्शनिक चिन्तन है। अथर्ववेदके विभिन्न स्थलोंपर विराट्, ब्रह्म, स्कम्भब्रह्म, उच्छिष्टब्रह्म, ईश्वर, प्रकृति, जीवात्मा, प्राण, व्रात्य, वशा, ब्रह्मौदन आदि विभिन्न स्वरूपोंका विस्तृत वर्णन मिलता है। अतः अध्यात्मविषयक चिन्तनाधिक्यके कारण भी 'ब्रह्मवेद' यह नाम हो सकता है।

अथर्ववेदके मन्त्रद्रष्टा ऋषियोंमें ब्रह्मा-ऋषिके द्वारा दृष्ट मन्त्रोंकी संख्या ८८४ है। इस आधारपर भी अथर्ववेदका नाम 'ब्रह्मवेद' हो सकता है।

भिषग्वेद—

अथर्ववेदके लिये 'भिषग्वेद' का प्रयोग भी मिलता है। इसमें विभिन्न रोगों तथा उनकी औषधियोंका भरपूर उल्लेख किया गया है। अतः यह नाम उपयुक्त है।

क्षत्रवेद—

अथर्ववेदमें स्वराज्य-रक्षाके लिये राजकर्मसे सम्बन्धित बहुतसे सूक्त उपलब्ध हैं। इसलिये अथर्ववेदको 'क्षत्रवेद' नाम दिया गया है।

अथर्ववेदकी शाखाएँ

अथर्ववेदकी नौ शाखाएँ थीं। जिनके नाम इस प्रकार हैं—(१) पैप्पलाद, (२) तौद, (३) मौद, (४) शौनक, (५) जाजल, (६) जलद, (७) ब्रह्मवद, (८) देवदर्श, और (९) चारणवैद्य। इन शाखाओंमें आजकल प्रचलित शौनक-शाखाकी संहिता पूर्णरूपसे उपलब्ध है। पैप्पलादसंहिता अभी अपूर्ण ही उपलब्ध है। इनके अतिरिक्त अन्य शाखाओंकी कोई भी संहिता उपलब्ध नहीं है।

शौनकसंहिताका संक्षिप्त परिचय

मन्त्रोंका संकलनक्रम—

अथर्ववेदमें २० काण्ड, ७३० सूक्त, ३६ प्रपाठक और ५९८७ मन्त्र हैं। इसमें मन्त्रोंका विभाजनक्रम एक विशिष्ट शैलीका है। पहले काण्डसे सातवें काण्डतक छोटे-छोटे सूक्त हैं। पहले काण्डमें प्रायः ४ मन्त्रोंके सूक्त हैं। दूसरे काण्डमें ५ मन्त्रोंके, तीसरे काण्डमें ६ मन्त्रोंके, चौथे काण्डमें ७ या ८ मन्त्रोंके, पाँचवें काण्डमें ८ या उससे अधिक मन्त्रोंके सूक्त हैं। छठे काण्डमें १४२ सूक्त हैं और प्रायः सभी सूक्त ३ मन्त्रोंके हैं। सातवें काण्डमें ११८ सूक्त हैं और प्रत्येक सूक्तमें प्रायः एक या दो मन्त्र हैं। आठवें काण्डसे १२ वें काण्डतक विषयकी विभिन्नता और बड़े-बड़े सूक्तोंका संकलन है। तेरहवें काण्डसे २० काण्डतक भी अधिक मन्त्रोंवाले सूक्त हैं, परंतु विषयकी एकरूपता है। जैसे बारहवें काण्डमें पृथ्वीसूक्त हैं, जिसमें राजनीतिक तथा भौगोलिक सिद्धान्तोंकी

भावना दृष्टिगोचर होती है। इसी प्रकार १३वें, १५वें और १९वें काण्ड अध्यात्मविषयक हैं। १४वेंमें विवाह, १६वेंमें दुःस्वप्ननाशनके लिये प्रार्थना, १७वेंमें अभ्युदयके लिये प्रार्थना, १८वेंमें पितृमेध, १९वेंके शेष मन्त्रोंमें भैषज्य, राष्ट्रवृद्धि आदि तथा २०वेंमें सोमयागके लिये आवश्यक मन्त्रोंका संकलन है। २०वें काण्डमें अधिकांश सूक्त इन्द्रविषयक हैं।

प्रतिपाद्य विषय

१-ब्रह्मविषयक दार्शनिक सिद्धान्त—

इस वेदमें ब्रह्मका वर्णन विशेषरूपसे हुआ है। ब्रह्मका वर्णन इस वेदमें जितने विस्तार और सूक्ष्मतासे हुआ है, उतने विस्तारसे एवं सूक्ष्मतासे किसी वेदमें नहीं हुआ है। उपनिषदोंमें ब्रह्मविद्याका जो विकसित रूप मिलता है, उसका स्रोत अथर्ववेद ही है, यह कहना अत्युक्ति नहीं होगी। विविध दृष्टिकोणसे इसमें ब्रह्मतत्त्वका विवेचन हुआ है। ब्रह्म क्या है? उसका स्वरूप क्या है? उसकी प्राप्तिके साधन क्या हैं? वह एक है या अनेक? उसका अन्य देवोंके साथ क्या सम्बन्ध है? आदि सभी विषयोंके साथ-साथ जीवात्मा और प्रकृतिका भी विवेचन हुआ है। इसमें विराट्, ब्रह्म, स्कम्भ, रोहित, व्रात्य, उच्छिष्ट, प्राण, स्वर्गौदन आदि ब्रह्मके विविध स्वरूपोंके विस्तृत वर्णन मिलते हैं।

इसमें संसारकी उत्पत्ति जलसे बतायी गयी है। प्रारम्भमें ईश्वरने जलमें बीज डाला। उससे हिरण्यगर्भकी उत्पत्ति हुई और उससे सृष्टिका प्रारम्भ हुआ (अथर्ववेद ४। २। ६। ८)।

इस प्रकार अध्यात्मविषयक दार्शनिक चिन्तन ही अथर्ववेदका मूल प्रतिपाद्य विषय है।

२-भैषज्यकर्म—

प्रतिपाद्य विषयोंकी दूसरी कोटिमें विविध रोगोंके उपचारार्थ प्रयोग किये जानेवाले भैषज्य सूक्त आते हैं। जिनके मन्त्रोंके द्वारा देवताओंका आह्वान तथा प्रार्थना आदि किये जाते हैं। साथमें विभिन्न रोगोंके नाम तथा उनके निराकरणके लिये विविध प्रकारकी औषधियोंके नाम भी उक्त सूक्तोंमें प्राप्त होते हैं। जलचिकित्सा, सूर्यकिरणचिकित्सा और मानसिक चिकित्साके विषयोंपर इस वेदमें विस्तृत वर्णन मिलता है।

३-शान्तिक तथा पौष्टिक कर्म—

विभिन्न प्रकारकी क्षति, आपत्ति या अवाञ्छित क्रियाकलापोंसे मुक्त होनेके लिये किये जानेवाले कर्मोंको शान्तिक कर्म कहते हैं। दुःस्वप्ननाशन, दुःशकुन-निवारण आदिके लिये किये जानेवाले देव-प्रार्थनादि विभिन्न सूक्तोंके जप आदि इसके अन्तर्गत आते हैं।

ऐश्वर्यप्राप्ति और विपन्निवृत्तिके लिये प्रयोग किये जानेवाले सूक्त पौष्टिक कर्मके अन्तर्गत आते हैं; जैसे—पुष्टिवर्धक, मणिबन्धन तथा देव-प्रार्थना आदि।

४-राजकर्म [राजनीति]—

अथर्ववेदमें राजनीतिक विषयोंका भरपूर उल्लेख मिलता है। राजा कैसा होना चाहिये? राजा और प्रजाका कर्तव्य, शासनके प्रकार, राजाका निर्वाचन और राज्याभिषेक, राजाके अधिकार एवं कर्तव्य, सभा और समिति तथा उनके स्वरूप, न्याय और दण्डविधान, सेना और सेनापति, सैनिकोंके भेद एवं उनके कार्य, सैनिक-शिक्षा, शस्त्रास्त्र, युद्धका स्वरूप, शत्रुनाशन, विजयप्राप्तिके साधन आदि विविध विषय इसके अन्तर्गत आते हैं।

५-सांमनस्यकर्म—

अथर्ववेदमें राष्ट्रिय, सामाजिक, पारिवारिक, राजनीतिक तथा धार्मिक सामञ्जस्यके लिये विशेष महत्त्व दिया गया है और परस्परमें सौहार्द-भावना स्थापित करनेके लिये विभिन्न सूक्तोंका स्मरण करनेका विधान किया गया है।

६-प्रायश्चित्त [आत्मालोचना]—

ज्ञात-अज्ञात-अवस्थामें किये हुए विभिन्न त्रुटिपूर्ण कर्मोंके कारण उत्पन्न होनेवाले सम्भावित अनिष्टोंको दूर करनेके लिये क्षमा-याचना, देव-प्रार्थना, प्रायश्चित्तहोम, चारित्रिक बदनामीका प्रायश्चित्त और अशुभ नक्षत्रोंमें जन्मे हुए बच्चोंके प्रायश्चित्त आदि विविध प्रायश्चित्तोंका उल्लेख इसमें मिलता है।

७-आयुष्यकर्म—

स्वास्थ्य तथा दीर्घायुके लिये देवताओंकी प्रसन्नतापर विश्वास करते हुए विभिन्न सूक्तोंके द्वारा दीर्घायुष्य-प्राप्तिहेतु प्रार्थना की गयी है। इसके अतिरिक्त दीर्घायु-प्राप्तिके लिये हाथ तथा गलेमें रक्षासूत्र एवं मणियोंको बाँधनेका विधान है।

८-अभिचार-कर्म—

दैत्य-राक्षस तथा शत्रु आदिके उद्देश्यसे किये जानेवाले विभिन्न प्रयोग एवं विधियाँ इसके अन्तर्गत आती हैं। मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि विषयोंको अभिचार कहते

हैं, अथर्ववेदमें आभिचारिक मन्त्रोंकी संख्या बहुत कम मात्रामें उपलब्ध है, परंतु कतिपय पाश्चात्त्य विद्वान् अथर्ववेदको अभिचारकर्म-प्रधान वेदके रूपमें भी स्वीकारते हैं। हमारी दृष्टिमें तो यह बात बिलकुल युक्तिसंगत नहीं है, क्योंकि अथर्ववेदमें कितने मन्त्र किस कर्ममें विनियुक्त हैं, प्रथमतः यह देखना चाहिये। इसके बाद कौन-कौनसे मन्त्रोंमें किन-किन विषयोंका वर्णन है—यह देखनेसे पता चलता है कि अथर्ववेदमें अधिकतम मन्त्र अध्यात्मदर्शन-विषयक हैं। इसी कारण अथर्ववेदको 'ब्रह्मवेद' कहा जाता है।

इस प्रकार अथर्ववेदके विषय-विवेचनसे यह पता चलता है कि इसमें धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षरूपी पुरुषार्थ-चतुष्टयके सभी अङ्गोंका वर्णन है। शास्त्रीय दृष्टिसे धर्मदर्शन, अध्यात्म और तत्त्वमीमांसासे सम्बद्ध सभी तत्त्व इसमें विद्यमान हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टिसे राजनीति, अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र और ज्ञान-विज्ञानका यह भण्डार है। साहित्यिक दृष्टिसे रस, अलंकार, छन्द तथा भाव एवं भाषासौन्दर्य आदि विषय इसमें विद्यमान हैं। व्यवहारोपयोगिताकी दृष्टिसे भावात्मक प्रेरणा, मनन-चिन्तन, कर्तव्योपदेश, आचारशिक्षा और नीतिशिक्षाका इसमें विपुल भण्डार है। संस्कृतिकी दृष्टिसे इसमें उच्च, मध्यम और निम्न—इन तीनों स्तरोंका स्वरूप परिलक्षित होता है। अतः अथर्ववेद वैदिक वाङ्मयका शिरोभूषण है। विषयकी विविधता, स्थूलसे सूक्ष्मतम तत्त्वोंका प्रतिपादन, शास्त्रीयताके साथ व्यावहारिकताका सम्मिश्रण इसकी मुख्य विशेषता है।

कुछ आथर्वणिक ग्रन्थोंका विवरण

अथर्ववेदकी नौ शाखाओंके ब्राह्मण-ग्रन्थोंमें आज एक 'गोपथ-ब्राह्मण' ही उपलब्ध है। यह ग्रन्थ भी पैप्पलाद शाखासे सम्बद्ध है। इसके दो भाग हैं—पूर्वभाग तथा उत्तरभाग। पूर्वभागमें ५ प्रपाठक तथा उत्तरभागमें ६ प्रपाठक हैं। प्रपाठक कण्डिकाओंमें विभक्त हैं। पूर्वभागके प्रपाठकोंमें १३५ तथा उत्तरभागके प्रपाठकोंमें १२३ कण्डिकाएँ हैं। इसका मुख्य प्रतिपाद्य विषय श्रौतयज्ञोंका वर्णन ही है। इसमें प्रतिपादित निर्वचन-प्रक्रिया भी उत्यन्त रोचक है।

अथर्ववेदसे सम्बद्ध श्रौतसूत्रोंमें एकमात्र श्रौतसूत्र 'वैतानसूत्र' के नामसे प्रसिद्ध है। यह ग्रन्थ शौनक-शाखासे सम्बद्ध है। इसमें श्रौतकर्मोंका विनियोग बताया गया है और इसमें आठ अध्याय हैं। अथर्ववेदके गृह्यसूत्रोंमें 'संहिताविधि' के नामसे प्रसिद्ध 'कौशिक-गृह्यसूत्र' उपलब्ध है। यह ग्रन्थ शौनक-संहिताका प्रत्यक्ष विनियोग बताता है। श्रौतसूत्र भी इसीके आश्रित हैं। १४ अध्याय तथा १४१ कण्डिकाओंमें विभक्त कौशिक-सूत्र आथर्वण साहित्यका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। शिक्षाग्रन्थोंमें 'माण्डूकी शिक्षा' उपलब्ध है। १७९ श्लोकोंसे युक्त यह शिक्षाग्रन्थ अथर्ववेदके स्वर तथा वर्णोंके विषयमें जानकारी देता है।

इसी प्रकार अथर्ववेदसे सम्बद्ध ५ कल्पसूत्र तथा ५ लक्षणग्रन्थ हैं। पाँच कल्पसूत्र ये हैं—(१) नक्षत्रकल्प, (२) वैतानकल्प (वैतान श्रौतसूत्र), (३) संहिताविधि (कौशिक-गृह्यसूत्र), (४) आङ्गिरस-कल्प और (५) शान्तिकल्प। इनमेंसे आजकल केवल दो ही कल्पसूत्र उपलब्ध हैं। लक्षणग्रन्थोंमें 'शौनकीया चतुरध्यायिका' चार अध्यायोंमें विभक्त है। यह सबसे प्राचीन अथर्ववेदीय प्रातिशाख्य है। सन् १८८२ में अमेरिकन विद्वान् डॉ० ह्विट्नीने इसे सानुवाद प्रकाशित किया था। अभी १९९८ में वाणी-मन्दिर, नयी सड़क, वाराणसी 'निर्मल' और 'शशिकला' ने संस्कृत तथा हिन्दी दोनों भाष्यसहित इसको प्रकाशित किया है। इसके अतिरिक्त 'अथर्वप्रातिशाख्य' नामक दूसरा प्रातिशाख्य भी उपलब्ध है। इसमें १९२३में श्रीविश्वबन्धु शास्त्रीजीद्वारा प्रकाशित केवल सूत्रोंका मूल पाठ और डॉ० श्रीसूर्यकान्तजी शास्त्रीद्वारा १९४० में लाहौरसे प्रकाशित—इस प्रकार दो प्रातिशाख्य उपलब्ध होते हैं। श्रीसूर्यकान्तजीद्वारा प्रकाशित प्रातिशाख्यमें उदाहरणसहित कुछ टिप्पणियाँ भी हैं। तीसरे लक्षणग्रन्थमें 'पञ्चपटलिका', चौथेमें 'दन्त्योष्ठविधि' और पाँचवेंमें 'बृहत्सर्वानुक्रमणिका' भी आजकल उपलब्ध हैं। पञ्चपटलिकामें अथर्ववेदके काण्डों तथा तद्गत मन्त्रोंकी संख्याका विवरण, दन्त्योष्ठविधिमें बकार तथा वकारका उच्चारणगत नियम तथा बृहत्सर्वानुक्रमणिकामें अथर्ववेदके ऋषि, देवता तथा छन्दोंका परिचय प्रस्तुत किया गया है।

अथर्ववेदके प्रमुख उपनिषदोंमें पैप्पलाद-शाखाका प्रश्नोपनिषद् उपलब्ध है और शौनक-शाखाके मुण्डक तथा माण्डूक्य दो उपनिषद् हैं। इनके अतिरिक्त अथर्ववेदसे सम्बद्ध अन्य उपनिषदोंकी संख्या भी अधिक है। मुक्तिकोपनिषद्के अनुसार १०८ उपनिषदोंमें ३१ उपनिषद् अथर्ववेदसे सम्बद्ध हैं।

[श्रीऋषिरामजी रेग्मी, अथर्ववेदाचार्य]